माला तिलकके तारणहार-दिग्विजयी-विजेता

श्री गुसांईजी के चतुर्थ कुमार

श्री गोकुलनाथजी कृत

卐 २४ वचनामृत 卐

॥ मंगलाचरण ॥

नमामि गोकुलाधीशं लीलामानुषविग्रहम् ॥
व्रजाधीशं विश्वविभुं पार्वती प्राणवल्लभम् ॥१॥
मायावादि चिद्रूपादि प्रतिबन्ध निवारकः ॥
दर्पहा दुर्मदांधानां पायाद्वो भक्त भूषणः ॥२॥
नमामि श्रीपतिदेवं वल्लभं वल्लभात्मजम् ।
यः करोति सदाऽरण्ये मंगलं जनवर्जिते ॥३॥
जयति विठ्ठलसुवन प्रगट वल्लभवल्ली ।
प्रबल पनकरी तिलकमाल राखी ॥४॥

वन्देऽहं गोकुलाधीशं भगवतं कृपानिधिं ।
पावनो या मुनेजातः कलौघोरे द्विजेषुयः ॥१॥
नमामि गोकुलाधीशं लीला मानुष विग्रहम् ।
व्रजाधीशं विश्वविभुं पार्वती प्राणवल्लभम् ॥
जहाँगिराद्रक्षिता मालाद्यधर्माद्रक्षिताजनाः ।
चिद्रुपाद्रक्षितोधर्मो पातुवः पार्वतीपतिः ॥

नमामि श्रीपतिदेवं वल्लभं वल्लभात्मजम् ।

यः करोति सदारण्ये मंगलं जन वर्जिते ॥१॥

मायावादि चिद्रुपादि प्रतिबन्ध निवारकः ।

दर्पहायायाव्योदुर्मदांधानां भक्तभूषणः ॥२॥

श्री गोकुलेशजी घर के प्रत्येक सेवकों को मंगलाचरण के इस श्लोक का मुख्य पाठ करना चाहिये ।

卐 *वचनामृत पहेलो* 卐

एक समय पुष्टिमार्गीय सिद्धांत श्रीगोकुलनाथजी ने श्रीगुसाँईजी सो पूछ्यो, तब श्री गुसाँईजी चाचा हरिवंशजी तथा नागजीभट्ट आदि अनेक भगवदीयन के अर्थ श्री गोकुलनाथजी प्रति आप अपने पुष्टिमार्ग को सिद्धांत श्री मुखसों कहें, सो सुनिके चाचा हरिवंशजी तथा नागजी भाई आदि अंतरंग भगवदीय अपने मन में बहोत ही प्रसन्न भये, ता पाछें श्री गोकुलनाथजी आप अपनी बैठक में पधारे, सो श्रीगुसाँईजी के वचनामृत को अनुभव सिद्धांत अपने मनमें करत हते, ता समे श्रीगोकुलनाथजी के सेवक कल्याण भट्टजी ने आयकें श्री गोकुलनाथजी सों दंडोत किये, तब श्री गोकुलनाथजी बोले नहीं, आपुतो पुष्टिमार्गीय सिद्धांत के रस में मग्न होइके अनुभव करत हैं, तब कल्याण भट्टजी हाथ जोरकें ठाडे होय रहे, तापाछे चारघडी में श्रीगोकुलनाथजी उंची दृष्टि करिकें कल्याणभट्ट की ओर देखें, तब फेरि कल्याण भट्ट ने दंडवत किये, तब श्री गोकुलनाथजी

आप कल्याण भट्ट सों आज्ञा किये, जो तुम कबके आये हो, तब कल्याण भट्टजी ने आपसों विनती कीनी जो महाराज मोकों आये तो चार घड़ी भइ है, तब श्रीगोकुलनाथजी प्रसन्न होयकें श्रीमुखसों आज्ञा किये, जो आप श्री गुँसाईजी अपने पुष्टि मार्ग को सिद्धांत मोसों कहे है सो पुष्टिमार्ग की रीति तो महा कठिन है, सो बनत नाहिं है, तब कल्याण भट्ट ने श्रीगोकुलनाथजी ते विनंती कीनी जो महाराज कछु हमारे लायक होयसो कृपा करिकें हमसों कहिये, हमको आपके श्रीमुख के वचन सुनिवेको महामनोरथ है, और पुष्टिमार्ग की रीति तो बननी महा कठिन है परन्तु हमको सुनिवे कोहु अति दुर्लभ है, यह वचन सुनिके, श्रीगोकुलनाथजी कल्याण भट्ट के उपर बहोत प्रसन्न भये, तब श्रीगोकुलनाथजी कल्याण भट्ट प्रति आज्ञा किये, जो यह वार्ता ओर के आगे कहिवेकी नहीं है, तुम भगवद् भक्त हो और तुमको पुष्टिमार्ग की रीति सुनिवे में अत्यन्त प्रीति है, तातें में तुमसों कहत हों, सो मन लगायकें सुनियो तथा हृदय में धारण करियो।

अब श्री गोकुलनाथजी भगवदीयके लक्षण तथा पुष्टिमार्गीय सिद्धांत कल्याण भट्ट प्रति कहत हैं-सो प्रथम तो अन्याश्रय न करनो, अन्याश्रय महाबाधक हे, और आश्रय तो एक श्रीनाथजी को ही करनो सो आश्रय सिद्ध भयेतें, सर्व कार्य होत है, ओर यह लोक में सब ठिकाने सुख पावत हैं, सो यह जानिकें आश्रय तो एक श्रीजीको ही करनो, सो आश्रयको हेत यह है जो अपने प्रभु बिना ओर काहुको न माने, ओर दूसरे सों भूलके मनोरथ न करे और अन्य अवतारनकी अपेक्षा न राखें, जीव तथा देह

काहुकी अपेक्षा न राखें तातें यह बाततो बहुत कठिन है, सो काहे तें जो यह संसार तो वृक्ष रूप है, ओर या संसार रूपी वृक्ष में दोय फल है, दोय फल कौन-कौन से, एक तो सुख, एक दुःख, सो दोय फल में लगत है, और संसार रूपी वृक्ष की शाखा तो अनेक है, तिनकी शाखा सो मनके तरंग है, और वृक्ष है ताको मूल जड़ है, सो बुद्धि है और फल है, सो अपने गिरवेसों डरपत है, सो है मोह रूपी बयार के डरते डार शाख फल फूल टुटनते डरत है, और अपने मुख्य तो वृक्ष की जड़ है सो दृढ़ है, तातें वृक्ष को डर नाहीं है, सो डार शाखा फल पत्र अपने मूल को दृढ़ जानत नाहीं है तातें अत्यन्त भय करिकें दुखित होत है, तेसेइ यह जीव है, संसाररूपी वृक्षकुंमोहरूपी बयारको डर है, ताको दुःख दूर करवे को अपने मूलको विचारनो, जो अपने मूल तो श्री भगवान है, तिनको जानत नहीं तातें अपने मूलको भूलि गयो हैं, और या अविद्या करिकें ऐसो विचार रहत नहीं, जो हमारो मूल भगवान है, सो सर्वोपरि दृढ़ है, हमको या मोहरूपी बयार की चिंता नाहीं है, इतनी बुद्धि दुष्ट स्वभाव करिके, जीवको रहत नाहीं है, क्योंकि मोहरूपी बयार कें डरतें डरपत है ओर या संसार में अनेक प्रकार के दुःख पावत है, तेसेइ या मनुष्य को या संसार में अहंता ममतात्मक वृक्षरूपी है, और डार याको कुटुम्ब है, और शाखा याकी स्त्री पुत्र परिवार है, पत्र मनके तथा देह संबंधी अनेक मनोरथ के तरंग हैं, ओर फल तो दोय सुख-दुःख हैं, और मूल याके भगवान् हैं, ऐसे अविद्या करिके मोहरूपी बयार

लागे है तब अपने मन में अत्यन्त भयभीत होत हैं, और अपने मन में कहे है, जो या बियारतें गिरुंगो, यह संसार के भय करिके अपने मूल भगवान् को भूल गयो है, और अपने कुटुम्बरूपी डार शाखासों लपटात है, और उनसों मिलिके अनेक प्रकार के दुःख-सुख को अनुभव करत है, यह वृक्षरूपी मनुष्य को मायारूपी अविद्या लागी है, तातें मोहके वश होयके डरपत है, जो मेरे कुटुम्ब स्त्री पुत्रादिक को दुःख होयगो, यह चिंता याको मोहरूपी बयार लागेतें होत है, तातें अपने मूल भगवान् है, सो दृढ़ हैं सो मोको लौकिक अलौकिक चिंता नाहीं है सो भूलि जात हैं, तब लौकिक कुटुम्ब मिलि के याको अन्याश्रय करावत हैं, सो या प्रकार करत हैं, और लौकिक में कोइतो कहत हैं, जो तुम कोई देवता को मनावो तुमको सुख होयगो, तुमारो भलो होयगो, और कोई कहत हैं जो तुम्हारो मित्र भयो होय तो मिलेगो, तब तुमारो कष्ट दूर होयगो और कोई कहत है जो देवी की मानता करेतें भलो होयगो, यह दुर्बुद्धि जीव ऐसे करत हैं, तब यह जीव अन्याश्रय करत है, सो ज्यों ज्यों करत हैं त्यों-त्यों श्री ठाकुरजी सों दूरि परत है, सो अन्याश्रय करिके भगवानतें बहिर्मुख होत है, और मोहरूपी बयार कैसी है जो जीव को भ्रम उपजावत है, और दृढ़ अनन्य भक्त है सो तो अन्याश्रय सर्वदा नहीं करत है और जब कछु लौकिक सुख-दुःख जीवको होत है तब यह दृढता राखत है, जो श्रीजी करेंगे सो होयगो, मैं तो दास हों, सुख-दुःख तो देह के प्रारब्ध सों होत हैं सो देहकूं भोगेतें छुटेगो, ऐसी दृढ़ता राखनी, ऐसी दृढ़ता राखत है, तिनको

दुःख तत्काल निवृत्त होत है, और होत है सो पाछिले प्रारब्धसों होत है, सो भगवदीय मानत नाहीं या प्रकार दृढ़ आश्रय श्री ठाकुरजी को रहे ताकों भगवदीय कहिये और जों वैष्णव होयकें अन्याश्रय करत हैं और असमर्पित वस्तु खात है, तासों श्री आचार्यजी महाप्रभुजी बहुत दूर रहत हैं, यह निश्चय जाननो, सो यह समझिकें वैष्णव को यह योग्य हैं, जो अन्याश्रय न करनो, असमर्पित न खानों, तातें अपने मन में दृढ़ आश्रय एक श्रीजी को ही करनों, तब वैष्णव या लोक परलोक में सुख पावें, या प्रकार श्रीगोकुलनाथजी कल्याण भट्ट प्रति कहे हैं।

।। इति श्री गोकुलनाथजीकृत प्रथम वचनामृत सम्पूर्णम् ।।

##卐 वचनामृत दूसरो 卐

अब दूसरो वचनामृत श्रीगोकुलनाथजी कल्याण भट्ट प्रति कहत हैं-जो वैष्णव को प्राणी मात्र उपर दया राखनी, जो कुंजरतें चेंटी पर्यन्त सबमें एकही जीव जाननों। छोटे-बड़े सब जीव प्रभु के हैं, अन्तर्यामी सबमें एक ही हैं, और प्रतिबिंब न्यारे-न्यारे दीसत हैं, यह जानके भगवदीयकुं हिंसा से अत्यन्त डरपत रहेनो आपन तें शीत उष्ण सब में विचारत रहेनों, ओर काहू को हृदय कल्पावनो नहीं। वचन, मन, देहतें सबको भलो करनों, आपुन वचन, मन, देहतें, न्यारो होई, सुख दुःखतें रहित रहे। तातें वैष्णव होयकें प्राणी मात्र उपर दया राखनो, यह श्री गोकुलनाथजी वैष्णव को आज्ञा किये हैं।

।। इति श्री गोकुलनाथजीकृत दूसरो वचनामृत सम्पूर्णम् ।।

ॐ वचनामृत तीसरो ॐ

अब तीसरो वचनामृत श्री गोकुलनाथजी कल्याण भट्ट सों कहत हैं-जो वैष्णवकों सदा प्रसन्न रहनों, और दुःख-सुख दोउन को एक बराबर करिके जाननों, सुखतें हर्ष होय और दुःखतें कलेश होय सो न करनों, और वैष्णवतें दीन होय प्रीति राखें, और अहर्निश श्रीजी को ध्यान राखें द्रव्यादिककुं सुमार्ग में, गुरुसेवा, वैष्णव सेवा में उठावें और अपने शरीर भोगार्थ न उठावें और लौकिक वैदिक आवश्यक होय तो संकोच रहित प्रभु को दिखाय आज्ञा लेइ उठावें और वैष्णव पास मान छोड़िकें जाय, और निशंक होयके भगवद्स्मरण करें। जहां भगवद् वार्ता में संकोच होय, तह भगवद् धर्म न बढ़े और संदेह रहे ताते संदेह की निवृत्ति होय वहां प्रीति बढ़े और ज्ञान होय अपनी देह को अनित्य करि जाने। तब मन होय और काहु को बुरो न होय दुःख में धीरज धरे, ताको उत्तम वैष्णव जाननो, या प्रकार श्री गोकुलनाथजी कल्याण भट्ट प्रति आज्ञा किये हैं।

॥ इति श्री गोकुलनाथजीकृत तीसरो वचनामृत सम्पूर्णम् ॥

ॐ वचनामृत चौथो ॐ

अब गोकुलनाथजी वैष्णवन को चौथो वचनामृत कहत हैं-जो भगवदीय को क्रोध न करनो, ताको कारण यह है, जो क्रोध है सो चांडाल को स्वरूप है, जो जहां क्रोध होय तहाँ भगवद् धर्म तथा भगवान न रहें, क्रोध होत है तब भगवद्भाव जात रहत है और क्रोध है सो अग्निरूप है, भगवद् धर्म को

नाश करत है, जाको क्रोध बहुत होत है, सो क्रोधावेश से अशुद्ध रहत है, जैसे चांडाल के स्पर्शतें सचैल स्नान करनों पड़े एसो ए दुराचारी है, सो क्रोधतें जीवकों सचैल स्नान करनों पड़े, नहि तो हाथ पांवतो धोवनो, और सोल्हे कुरला (कोगला) करनो, चरणामृत लइ मनमें शांत होय तब क्रोधावेशतें छूटे, तातें भगवद् धर्म, भगवद् स्मरण पवित्र होयके करें, और क्रोधावेश में देह छूटे तो नर्क में पड़े तथा अधोगति होय, क्यों जो "तामसानां अधोगतिः"।

और बिना कारण, भगवद्सेवा संबंध बिना क्रोध करे तो श्वान योनि पावे और लोभतें काहुको द्रव्य चुरावे और पूछेतें क्रोध करत हैं, सो सर्पयोनिकु पावत हैं, और कोई वैष्णवसों ईर्षा करके भगवद् धर्म कीर्तन आदि में प्रतिबंध करिके छुड़ावें सो वह कुंभीपाक नरकको कीड़ा साठ हजार वर्ष तांइ होत है, पाछै सूकर, कूकर, सर्प इत्यादिक योनिकुं पावै हैं, ताते भगवद् धर्म संबंधी वार्ता साधारणहु होय तामें विघ्न न करनों, ओर जो क्रोध ईर्षा करिकैं, काहुके घर में अग्नि लगावत हैं, सो तीनों पाप करिकें नर्क में पड़त हैं, और ईर्षा तथा क्रोधतें काहुको विष देत हैं अथवा जल में डुबावत हैं, तथा शस्त्र ले अपघात करत हैं, सो नर्क भोगके सर्प योनिकुं पावत हैं, तिनसों दशगुणों प्रायश्चित करत हैं, तब शुद्ध होत हैं। क्रोध सगरे धर्मनमें बाधक हैं, महादुर्बुद्धि होय के अज्ञानतें करत हैं, तातें मन लगायकें क्रोधको निवारण करनो, सो भगवद् इच्छारूपी खड्गतें दूर करें और क्रोध करिकें गुरुकी निंदा करे, तथा कठिन वचन

बोले सो मूसक होय, पाछें सर्प योनिकुं पावे हैं, ता पाछें प्रेतयोनि पावत हैं, और भगवद् अर्थ बिना माता-पिता सों क्रोध करत हैं सो दरिद्र होत हैं, और वैष्णवसों क्रोध करत हैं तिनको सगरो सुकृत धर्म को नाश होत है, या प्रकार श्री गोकुलनाथजी आप कल्याणभट्टसों आज्ञा किये हैं, सो क्रोधको महा दोष हैं, सों कहेते पार न आवे, तासों यासों सावधान रहनो।

।। इति श्री गोकुलनाथजीकृत चतुर्थ वचनामृत सम्पूर्णम् ।।

卐 वचनामृत पाँचमों 卐

अब श्री गोकुलनाथजी कल्याण भट्ट प्रति वैष्णवनकों पाँचमों लक्षण कहत हैं, जो वैष्णव होयके एक श्री भगवान को ही आश्रय जाने और भगवद् सेवा विषे एकाग्रचित राखें, परम फलरूप जाने, और लौकिक वैदिक में मन की चंचलता न राखे और श्रीजी को स्वरूप श्री भागवत में तथा पुष्टिमार्गीय ग्रंथन में कह्यो हैं, सो तिनको दर्शनकरि ध्यान हृदय में राखे। जैसे भगवद्नाम स्मरण करे, तैसे ही अपने गुरुके नामको हृदय में स्मरण जप करे, भगवद् कटाक्ष, अंग, वस्त्र, आभरण में अपनो मन लगायके चिंतवन करे, तथा अनेक लीला हैं, तिनको चिंतवन करे और भगवद्नाम बिना जो क्षण जाय तो हृदय में उसास, लैके ताप करे, और अपरस में स्नान करि, चरणामृत तथा श्रीयमुनाजी की रज मुखमें मेले, दोउ नेत्रनसों लगाय माथे धरे, हृदयसों लगावे, तब अलौकिक दृष्टि होय, तब भगवद् धर्म माथे बिराजे, तब हृदय शुद्ध होय और भगवद् मंदिर में

जाय तो छोटी-मोटी सेवा अपनो भाग्य मानिके करे, पात्र मांजे, मंगल भोग धरि सज्या फेरिके संभारे, मंगल आरती कर, तिथि वार उत्सव देखि अभ्यंग करावे और जैसो स्वरूप तैसो पुष्टिमार्ग अनुसार तिथि ऋतुके अनुसार सिंगार करे और सेवा सिंगार विषे चित्तको उद्वेग संकल्प-विकल्प न करे, और अपने मन में अपराध को भय राखे, श्रीमहाप्रभुजी की कृपातें अपनो भाग्य जानिके सेवा करे, मंगला, राजभोग, उत्थापन, सैन कराय सांकर, तारो लगाय, वस्तु सामग्रीकी चोकसी राखे, पाछें रात्री को वैष्णवनसों मिलिके भगवद्वार्ता कीर्तन अवश्य करनो और कोई वैष्णव न मिले तो, एतन्मार्गीय ग्रन्थन की टीका देखे, एतन्मार्गीय वैष्णव में जाय के वार्ता करे, सुने, जैसे सेवा में आलस्य न करे तैसे वैष्णव मिलाप में आलस न करे, स्नेह होय तब भक्ति बढ़े जो भगवद् सेवा न बने तोहु वैष्णव को संग न छोड़े, तो दैन्य होय, या प्रकार श्रीगोकुलनाथजी वैष्णवसों आज्ञा किये।

।। इति श्रीगोकुलनाथजीकृत पंचम वचनामृत सम्पूर्णम् ।।

卐 वचनामृत छट्ठमो 卐

अब श्री गोकुलनाथजी छट्ठमो लक्षण कहत हैं जो वैष्णव सेवा, भगवद्स्मरण, भगवद्धर्म इनमें पाखंड न करनो, और काहुके दिखायवेके अर्थ, पूजा अर्थ उद्धारार्थ न करे, आपनो सहज धर्म जानें जैसे ब्राह्मण, गायत्री जपे, लाभ संतोषसुं सेवा करे, "एक कालो द्विकालो वा" और विवेक बिना पूजा,

सेवा करे तो नर्क में पड़े और पाखंडी की पूजा, सेवा, प्रभु अंगीकार न करें या प्रकारसों श्रीगोकुलनाथजी कल्याण भट्ट प्रति कहे हैं।

।। इति श्री गोकुलनाथजीकृत छट्ठमो वचनामृत सम्पूर्णम् ।।

卐 वचनामृत सातमों 卐

अब श्री गोकुलनाथजी कल्याण भट्ट प्रति वैष्णवनसों सातमो वचनामृत कहत हैं - जो वैष्णव होयके काहुको अपराध न देखे, अथवा सुनेहु नहीं, यद्यपि काननसों सुने ओर आंखननसों देखे परन्तु मन में रंचकहु न लावे, यह जाने जो मैं मायावाद रूपी अविद्या में पर्यो हुँ, सो मोको दोष दीसत है इनमें रंचकहु दोष नहीं है, उत्तमोत्तम देखे, मध्यम देखकें कहें, दुष्ट झूंठी सांची लगाय ईर्षा करे, कोई सों खोटो काम करें, अपराध करे तोहु वाको भूलि जाय, वाको प्रसन्न करिके संकोच छुडावनो, भलो कार्य होय सो गुणकों प्रकाश करें, या प्रकार चले तो प्रभु कृपा करिके अपनी भक्ति को दान करें सो या प्रकार श्री गोकुलनाथजी कल्याण भट्ट प्रति पुष्टिमार्गीय सिद्धान्त कहत हैं।

।। इतिश्री गोकुलनाथजीकृत सप्तम वचनामृत सम्पूर्णम् ।।

卐 वचनामृत आठमों 卐

अब श्री गोकुलनाथजी कल्याण भट्ट प्रति आठमों लक्षण कहत हैं - जो वैष्णव होय सो साचो होय और लौकिक अलौकिक में कपट न राखें और भगवदीयसों मिथ्या न बोले, उनकी टहल

सेवा करें, उनसों भगवद् चर्चा करे, उनके हृदय को भाव तथा पुष्टिमार्ग को सिद्धांत अपने हृदय में धारण करे और बारंबार अपने मन में विचारें, भगवद् वार्ता को हेतु समझे, भगवदीय सों दीन व्हे रहेनो और भगवदीयके आगे अपनी बडाई न करनी और आज्ञा उल्लंघन न करनी, उनसे स्नेह बहुत राखनो श्री ठाकुरजी को लीला वार्ता को प्रकाश न जानत होय तो दीन होयके भगवदीयसो पूछनो, अपनी योग्यता न बतावनी, उन भगवदीयन के आगे भगवद्वार्ता चर्चा करनी, या प्रकार श्री गोकुलनाथजी कल्याण भट्ट प्रति आज्ञा कीये हैं।

।। इति श्री गोकुलनाथजीकृत अष्टम् वचनामृत सम्पूर्ण ।।

ॐ वचनामृत नवमों ॐ

अब श्री गोकुलनाथजी ओरहु आज्ञा करत हैं :- जो कोऊ निंदा दुर्वचन कहे ताको उत्तर न देनो सब सहन करनों, अपने में दोष जानि उनसों क्रोध न करनो। अपने मन में खेद न करनो और उनसों बहुत विरोध होय तो नेंक दूरि रहेनों, उनके कृत्य देखिकें दोष बुद्धि रंचकहु न करनी, उनसों जयश्रीकृष्ण को व्यवहार राखनो, उनकी निंदा न करनी, या प्रकार वैष्णवनके अपराध ते डरपत रहेनो, एसे डरपत रहे ताको सर्व कार्य सिद्ध होय, प्रभु कृपा करिकें हृदय में पधारें, निंदा सहनी। यह वैष्णवन को सर्वोपरि परम धर्म है या प्रकार श्री गोकुलनाथजी कल्याण भट्ट प्रति आज्ञा कीये हैं।

।। इति श्री गोकुलनाथजीकृत नवमो वचनामृत सम्पूर्णम् ।।

卐 वचनामृत दसमों 卐

अब ओरहु श्री गोकुलनाथजी वैष्णवकों दसमों लक्षण कहत हैं-जो श्री ठाकुरजी की सेवा काहुके भरोसे ना राखे, अपने सेव्य स्वरूप की सेवा आपही करनी और उत्सवादि समय अनुसार अपने वित्त अनुसार वस्त्र, आभूषण, भांति-भांति के मनोरथ करि सामग्री करनी। श्री ठाकुरजी के यहाँ नित्य नौतन उत्सव जानि प्रसन्न रहनो, अमंगल उदासीन कबहु न रहनों और सामग्री जा उत्सव में अपने घर की जो रीति है, सो रीति प्रमाण यथाशक्ति करनी, जो द्रव्य होय सो श्रीकृष्ण के अर्थ लगावनो, कृपणता नाहीं करनी, और भगवद्सेवा करिके श्रीठाकुरजी तें कछु मांगनो नाहीं, या रीति सों निष्काम होयके श्री ठाकुरजी की सेवा करनी और जो सूतकी होय, वृद्धि होय, रोगादि प्रतिबंध आय पड़े तो, अपने सुजाति वैष्णव पें सेवा करवावनी और सुजाति वैष्णव न होय तो मर्यादी वैष्णवकों कछु द्रव्य दैके सेवा करावनी, और जो मरजादी वैष्णव न होय तो समर्पनी पें सेवा करावनी और समर्पनी वैष्णव गाममें न होय, तो नामधारी वैष्णव सों पट वस्त्र थैली हाथ में पहराय के श्री ठाकुरजी की सेवा करावनी, साक्षात् श्री ठाकुरजी को स्पर्श न करावनों और याके हाथ की सखड़ी अनसखड़ी श्री ठाकुरजी अरोगे परन्तु आप न लेय, परन्तु आपुन को बड़ो प्रतिबंध आय पड़े तो लेनों और प्रतिबंध छूटे तब एक व्रत करे, तथा भेट काढ़े, तब श्रीठाकुरजी को स्पर्श करनों, और अन्य मार्गीय पें श्री ठाकुरजी की सेवा न करावे, नामधारी न मिले तो आपुई

पट-वस्त्रसों कोरी सामग्री धरे, श्री ठाकुरजी पोढे हीं आरोगें, परन्तु सेवा औरसों सर्वथा नाहीं करावनी, जो शरीर सर्वथा न चले तो श्री ठाकुरजी को गाम के वैष्णव तथा ओर गाँव के वैष्णव होय तिनके घर पधरावने, और मन करिकें ताप करे जो भगवद् सेवा न भई, तातें मन लगायके मानसी सेवा करनी, या प्रकारसों सेवा पहिले करि होय ताहि प्रकारसों सेवा करनी और मानसी सेवा को प्रकार यह है, जो अपने मन में श्री ठाकुरजी को ध्यान करिके श्री ठाकुरजी, श्री आचार्यजी, श्री गुसाँईजी के बालक जिनसों समर्पण कियो होय सो गुरुदेव, श्रीजी तथा सातों स्वरूप अपने गुरू के सेव्यरूप होय, तिनको नियमपूर्वक अंतःकरण सों दण्डवत करनों, पाछें मन ही करिके मंगलभोग धरि मंगला आरती करें, पाछे अभ्यंग स्नान, अंगवस्त्र आभूषण ॠतु के अनुसार धरावे, या प्रकार राजभोग उत्थापन, सेन पर्यन्त की सेवा की भावना करनी, परन्तु मन में संतोष न राखे, यह जाने जो मोसों साक्षात् हस्तसों सेवा कब करावेगें, सौ भगवद् सेवा में एकादश इन्द्रियन को विनियोग होत है, यह ताप करें, या प्रकार सों रहे, सो उत्तम वैष्णव है, या प्रकार श्री गोकुलनाथजी कल्याण भट्ट प्रति कहे हैं।

।। इतिश्रि गोकुलनाथजीकृत दसमो वचनामृत सम्पूर्णम् ।।

卐 वचनामृत ग्यारहमो 卐

अब ओरहु श्री गोकुलनाथजी ग्यारहमों लक्षण कहत हैं :- जो वैष्णव होय सो प्राणी मात्र उपर दया राखें, और वैष्णव अपने घर आवे तो प्रसन्न होय रहे और जाने जो वैष्णव द्वारा

प्रभु पधारे हैं, यह जानि तेल लगाय, ताते पानीसों न्हवाय, सुंदर ऋतु अनुसार वस्त्र पहिराय, नाना प्रकार के महाप्रसाद लिवावे, जो सामर्थ्य होय सो समय के सनमान करि प्रसन्न करनो और काहुको ऋण काढिके न करनो, ऋण हत्या बराबर है, काहुको दुःख दैकें कार्य न करनो, यह भावसों वैष्णवकों रहनों, और अन्य मार्ग के श्री ठाकुरजी की सेवा न करनी, और बिना मर्यादा के ठाकुर अपने श्री ठाकुरजी पास न बैठावनें, अपने श्री ठाकुरजी की सामग्री बिना मर्यादी को न देनों, प्रसादी होय सो बिना मर्यादी के श्री ठाकुरजी आगे भोग धरनों, सो प्रसाद मर्यादी न लेय। लीलाको भाव अन्यमार्गी तथा पात्र, बिना न कहनों, पुष्टिमार्ग में अनन्य होय तासों मिलिके निवेदन को तथा लीलाको भाव स्मरण करनों और अपने गुरुने मंत्र दियो होय, अष्टाक्षर, पंचाक्षर, तिनको प्रकाश जहाँ-तहाँ पात्र बिना न करनो। अपने श्री ठाकुरजी की सेवा जहाँ ताई बने तहाँ ताँई और के घर न पधरावनी, अपने घर सेवाको सौकर्य सामर्थ्य न होय तो और के घर जाय दोय घड़ी सेवा करकें परन्तु रंचकहु नियमपूर्वक करनो चाहिये, तैसेइ भगवदीयको संग हु नियमपूर्वक करनो चाहिये, या प्रकार श्री गोकुलनाथजी कल्याण भट्ट प्रति पुष्टिमार्गीय सिद्धांत कहे हैं।

।। इति श्री गोकुलनाथजी कृत एकादशमों वचनामृत सम्पूर्णम् ।।

卐 वचनामृत बारहमों 卐

अब श्री गोकुलनाथजी द्वादशमों वचनामृत कहत हैं :- जो वैष्णव अपने सेव्य स्वरूप को साक्षात् पुरुषोत्तम जानि कें सेवा

करनी, और अन्य मार्गीय के ठाकुरकों अपने श्री ठाकुरजी के बराबर न जानें और हस्ताक्षर, वस्त्र सेवा चित्र सेवा में अन्य भाव न जानें, साक्षात् जानि अपराध को भय राखे, गृहस्थ धर्म सेवा अर्थ जानें, अपने सुख अर्थ न जानें और अपनी देह अनित्य जानें, श्री ठाकुरजी की देह नित्य जाने। श्री ठाकुरजी की देह तथा भगवदीय की देह अनित्य करि जाने नहीं, लौकिक सुख तुच्छ जाने, भगवद् सेवा में प्रीत राखे तिनसों प्रीति विशेष राखें, इतनी लौकिक वैदिक वस्तु में न राखे। पराई वस्तु, पराई सत्ता होय तामें लोभ न राखे, कछु प्राप्त भये ते सुख न मानें, कछु हानि भये ते दुःख न मानें, गृहस्थ धर्म के शास्त्र काहु सों सुनिकें लौकिक में लीन होय न जानो, पुष्टिमार्गीय संबंधी शास्त्र के वचन को विचारत रहेनो, और सब शास्त्र पुष्टिमार्गतें अंतराल करवे वारे हैं, यह निश्चय जाननो, और भगवद्कार्य, गुरुकार्य, वैष्णव कार्य में मन राखें, जैसे जलतें कमल न्यारो है, तैसे लौकिक वैदिकते न्यारो रहें और श्री भागवत तथा श्री आचार्यजी के ग्रन्थन को भगवद् स्वरूप जानें, और श्री सर्वोत्तमजी को पाठ तथा जप मन लगायके करनो, यह पुष्टिमार्गीय वैष्णव की गायत्री हैं, तातें सगरे प्रतिबंध दूर करि पुष्टिमार्ग को फल पावे, ओर श्री यमुनाष्टक आदि पाठ नित्य करने और सर्वोत्तमजी को पाठ जप नियमपूर्वक करनो, गद्य के श्लोक को भाव विचारि के ताप क्लेश करनो, और सदा पवित्र रहनों, कुचैल मनुष्य को छहुवेउ की ग्लानि राखें, वैष्णव के वस्त्र में बहुत ग्लानि न राखें, अलौकिक देहसो लग्यों

रहे, और काहुके दिखायवे के लिए बड़ी अपरस न राखे, और जहाँ तहां विचारे बिना खान-पान न करनों, या प्रकार श्री गोकुलनाथजी आज्ञा करत हैं।

।। इति श्री गोकुलनाथजी कृत द्वांदसमों वचनामृत सम्पूर्णम् ।।

卐 वचनामृत तेरहमों 卐

अब श्री गोकुलनाथजी तेरहमो लक्षण कहत है-जो भगवदीय वैष्णव को काहुसों विरोध न राखनों और जहाँ क्रोध की वार्ता होय तहाँ ठाड़ो न रहनो, और सबनसे सर्वात्म भावसों हित राखनों, उनकी बात झूंठी होयसो अपने कहेतें खेद पावे सो न कहनो, ओर सांची कहेते खेद पावे सोहु न कहनो, याही प्रकार विवेकपूर्वक चलनो, ताको भगवदीय कहिये, और वैष्णव की निंदा करे, तो नरकमें पड़े, तहां विचार हैं जो वैष्णव कुमार्ग चले तो समझावनो, मनसे दोष लायके निंदा न करनी, अथवा मार्ग की रीति सो विपरीत चले ताको वैष्णव न जाननों यद्यपि बड़ो पंडित होय, और समझिवे वारो होय, परन्तु वाको अपने संप्रदाय को ज्ञान न होय तो वाको संग बड़ो दुःखदाई है, और थोरो समझे परन्तु पुष्टिमार्ग में तत्पर होय ताको संग हितकारी है वैष्णवकी निंदातें कोटि अपराधतें दुःखी होय, और वैष्णव होय के लौकिक वस्तु में तृष्णा न राखें और कामनातें दुर्बुद्धि होय और तृष्णातै केवल स्वार्थ होय तब भलो बुरो न सूझे। केवल स्वार्थ होय तब प्रसन्न होय, स्वार्थ न होय तो निंदा करे और तृष्णातें मनमें संकल्प विकल्प होत हैं, तब अपनो स्वरूप,

अपनो धर्म भूलि जात है, तब मन में अनेक प्रकार के लोभ रूपी तरंग उठत है, सो लोभ पें भलो बुरो कार्य सूझे नाहीं, और विवेक ज्ञान सब जात रहे तब झूँठी साँची बात बनायके अपने कार्य में तत्पर होत है, द्रव्य तथा वस्तु लेत में डरपत नाहीं है, और द्रव्य की रक्षा के अर्थ अनेक जतन करत हैं, ताते वैष्णव को लोभ तृष्णा करनो उचित नाँहि है, वैष्णव को अपराध होयगो तब श्री ठाकुरजी मति कहुं अप्रसन्न होय जाय ! और यह कालतो सगरे जगत को ग्रसत है, सो मोहुको ले जायगो, तातें लौकिक वैदिक में आसक्त न होय, और करे बिना न चले तातें सहज में बने सो करे, परन्तु मनते आसक्त न रहे यह मनमें जाने जो अपने धर्म बिना सहाय करिवेवारो कोई नहीं है अपनो वैष्णव धर्म गयो तब सब गयो, सो वैष्णव धर्म दृढ़ होय तो प्रभु सहाय करें, और धर्म गयो और कछु लौकिक सिद्ध भयो तो वो लौकिक चारि दिन में जात रहे, और परलोक बिगड़े, तातें भगवद् धर्म को माहात्म्य हृदेमें राखिके केवल प्रभुनको आश्रय करनो और स्वार्थतें धर्मजाय, अथवा लौकिक विषयादिक सुख के अर्थ करे तो धर्म जाय, और श्री ठाकुरजी तें गुरु विषे अधिक प्रीति राखनी, यह जानें जो कछु भयो है, सो इनकी कृपा ते भयो है, और आगेहु इनकी कृपाते होयगो, सो तो योगेश्वर के प्रसंग में कह्यो है, जो श्री ठाकुरजी में बड़ी प्रीति होय और गुरु विषे भाव तथा वैष्णव विषे दया नहीं होय तो वे सब राखमें होमत हैं, और वैष्णव को तथा गुरु को समाधान प्रभु साक्षात् अपनो करके मानत हैं और वैष्णव सों मिलके अपने जन्म-

जन्म के प्राणप्रिय श्री ठाकुरजी तिनको स्मरण करे, सो मनमें यह मनोरथ राखे जो श्री ठाकुरजी प्रसन्न कब होंय, लौकिक कार्य अर्थ न राखे या प्रकार श्री गोकुलनाथजी कल्याण भट्ट प्रति वैष्णव के लिए शिक्षा दिये हैं।

।। इति श्री गोकुलनाथजी तेरहमों वचनामृत सम्पूर्णम् ।।

卐 वचनामृत चौदहमों 卐

अब श्री गोकुलनाथजी चौदहमों लक्षण कहत हैं :-जो वैष्णव लौकिक वैदिक कार्य, देह कार्य, अनित्य करिजाने और पुष्टि मार्ग को धर्म सत्य जानि कार्य में तत्पर रहे और कोई धर्म तथा लौकिक कार्य तुच्छ जानि दुःख रूप जाने तथा तीर्थ को माहात्म्य सुनिके मनको सेवा स्मरणतें चलावनो नहीं और तीर्थ को फल तुच्छ करिजाने जो गंगाजी सरिखे तीर्थ जगत में कोऊ नाहीं सो "रुक्मिणी मनमेंहु न लाई", और वेद, पुराण, शास्त्र, श्री भागवत्, गीता इनके वचन सत्य करि जाने, परन्तु अनेक प्रकार के अधिकारी है तिनके अर्थ जाननों और पुष्टिमार्ग के वचन तथा धर्म मनमें राखनो, और अनेक प्रकार के फल तुच्छ करि जाननों, जयन्ति आदि एकादशी सत्य करिजाननो परन्तु फल की कामना मन में न राखें और भगवद्सेवा स्मरण सर्वोपरि जाने, और लौकिक विषय के अर्थ स्त्री को न जानें और विषय भगवदीय पुत्र होवेके अर्थ करे और भगवद् सेवा अर्थ स्त्री में प्रीति राखे, भगवदीयसों भगवद् वार्ता दैन्य पूर्वक करे, अपनी उत्कर्षता न जनावे, और अपने को ज्ञान न होय तो शुद्ध भाव

सों प्रश्न करे, और भगवद् भाव की वार्ता अपने मनमें दृढ़ विश्वास करि राखे, उन भगवदीय की लौकिक चेष्टा न देखें, तो भगवद् धर्म हृदय में दृढ़ करिके रहे, या प्रकारसो श्री गोकुलनाथजी आज्ञा किये हैं।

।। इति श्री गोकुलनाथजी कृत चौदहमों वचनामृत सम्पूर्णम् ।।

卐 वचनामृत पन्द्रहमों 卐

अब औरहु श्री गोकुलनाथजी पुष्टि मार्ग को सिद्धान्त कहत हैं:- जो वैष्णव को लौकिक में आतुरता न राखनी, लौकिक की आतुरता सों सेवा विषे उद्वेग होय, तब प्रभु प्रतिबंध करें, सो कहे हैं "उद्वेगः प्रतिबन्धो वा भोगोवास्यात्तु बाधकः" ऐसे कहे हैं, सो सेवा में लौकिक जीव को समाधान न करे और सेवा में गुरु को कार्य तथा भगवदीय को कार्य करे, तो चिन्ता नाहीं, सो प्रभु अपनो कार्य जानि बेगही प्रसन्न होय, और मुखरता दोष बहुत बड़ो है सो विचार राखनों, लौकिक वार्ता कहे सुनेते भीतर ते आसुरावेश होय तासों सेवा में काहूसों संभाषण न करनो और लौकिक बातहु न करनी और सेवा विषे बहुत बोलनो नाहीं और काहु की झूंठी साँची करनी नहीं। श्री ठाकुरजी की प्रीति सों प्रभुन ने कृपा को उपकार मानिकें टहल करनी, ऐसे जानिके करनी जो प्रभुन ने कृपा करिके टहल करवाई है, और सेवा करिके कछु लौकिक वैदिक में वासना न राखनी अपने मुख्य वैष्णव धर्म जानि सेवा करें, और वैष्णव होय के कछु दुःख में व्याप्त न होनों और श्री ठाकुरजी के वस्त्र आभरण सामग्री

स्वरूपात्मक जाने, तातें प्रभु संबंधी होय तो अपनो लौकिक न जाने, और प्रभुन को नये वस्त्र कराय, प्रसादी सो अपनो कार्य चलावे, और आप बिना परसादी पहरे तो बहिर्मुखता होय, और चिन्ता कष्ट काहु बात को अपने मन में न लावे और अपने भोग की निवृत्ति दुःख करके जाने। सुख में प्रभुन को भूलि जात है तातें सुखतें दुःख भलो, जो प्रभुनको स्मरण तो हो, सोई कुन्तीजी ने कही है, "जो विपत्ति भली जामें आपको दर्शन होय" और पुष्टिमार्गीय पंचाक्षर मन्त्र को जप करनों, और भगवद् नाम के भूलेते आसुरावेश होय है, और कालादिक खाय जात है और श्री ठाकुरजी बाललीला, किशोर लीला और व्रजसंबंधी लीला, इनके गान सुनेते श्री ठाकुरजी वेगही प्रसन्न होय और भगवदीय वैष्णव के आगे लीला को गान करनो, साधारण कोई बैठो होय तो शिक्षा की बात कहनी, शिक्षा के कीर्तन गान करने, जो भक्तिमार्ग को द्वेषी बहिर्मुख बैठ्यो होय तो अपने मन में गुनगान, भगवद्स्मरण करनो, बाहिर अपने धर्म को प्रकाश करे नहीं और भगवदीय को सेवा स्मरण तथा भगवद् धर्म बढायवे को उपाय करनों, और काम, क्रोध, मद, मत्सरता, लौकिक आवेश सर्वथा दूरि करनों, अपने पास तथा और वैष्णव के पास लौकिक आवे तो भगवद् धर्म में मन लगायवे की शिक्षा करनों, और न माने तो कछु बोलनो नही और वासों बहुत प्रीति न करनो, और भगवदीय के मिलिवे को उपाय करनों, उनकी टहल करि, प्रसन्न करि, भगवद् धर्म पूछनों सो विश्वास करि पूछनों, चलनो और जो कछु भगवद्

धर्म न बनि आवे तो ताप क्लेश करनों, और भगवदीय को तथा अपने गुरु को घर लायके प्रसन्न करनों और भगवदीय सों लौकिक वार्ता न करनों जो यह काल परम दुर्लभ हैं, सो यह जानिके पुष्टिमार्ग को प्रकार पूछनों और भगवदीय देशान्तर ते आये होय तो मिलनों, जो भगवदीय के हृदय में प्रभु बिराजत हैं, सो तिनके मिलेते हृदय पवित्र होय, तब अपने हृदय में प्रभु कृपा करिके सर्वथा पधारेंगे यह भाव जाननों, या प्रकार श्री गोकुलनाथजी वैष्णव को शिक्षा किये हैं।

।। इति श्री गोकुलनाथजीकृत पन्द्रहमों वचनामृत सम्पूर्णम् ।।

卐 वचनामृत सोलहमों 卐

अब ओरहु श्री गोकुलनाथजी आज्ञा करत हैं :- जो वैष्णव देश परदेश कूं जाय, और श्री ठाकुरजी बिराजत होय, तो तहाँ चलिके जाय, और श्री वल्लभकुल बिराजत होय तो महा नम्र होय जायके दर्शन करे, ता पाछे खान-पान करे, और जहाँ अन्य मार्गीय पूजा होत है तहाँ सर्वथा न जानों, और जहाँ श्री पुष्टि पुरुषोत्तम बिराजत होय और श्री वल्लभकुल विराजत होय तहाँ खाली हाथ न जानो और नित्य न बनि आवे तो जब जाय तब, अथवा बिदाय होय तब, यथाशक्ति फलफूल पहुँचावनों और भेट करनी, और श्रीनाथजी के दर्शन में आलस्य न करनों और प्रभुन के दर्शन में आलस्य करे तो अज्ञान बढ़े, प्रभुनको सेवा करत होय, और दर्शन होय चुके, तो अपराध नहीं, दर्शन ते ज्ञान होय, ओर ज्ञान हृदय में भये ते भगवद् स्वरूप हृदेमें

आरूढ़ होय, और अज्ञानतें विषयादिक आसक्ति होय और जप करें तो काहूसों जतावे नहीं, जप भाव हैं सो अत्यन्त गोपनीय है, और शास्त्र में कहे हैं कि जो जप ऐसे करनो जो होठ रंचकहु खुले नहीं, या भांति भीतर अनुभव करतहीं जप करनो, और गौमुखीकी माला बाहर काढनों नहीं, और माला भीतर उरझि जाय तो उपरी के मनिका निकासिके सुरझाय ऐसे धरे जो फिर न उरझे और मनिका १०८ राखे, तिनसों जप करें, और सुमेर को उल्लंघन न करे, सुमेरको उल्लंघन करें तो लीलातें बाहिर परे जपको फल तिरोधान होय, और गौमुखी उपरणा में ढांकिके जप करनो, और गौमुखी है सो अलौकिक हैं, और जप में बोलनों नाहीं, देह मनको चंचल न करनो, नेत्र मुंदे रहे, सो लौकिक में दृष्टि न जाय, जपकी सेवा को साधारण लौकिक क्रिया न जाने, जो लौकिक जाने तो वासों प्रभु जप न करावे, और प्रतिबन्ध होय, तातें सेवा जप को माहात्म्य भूलें नाहीं, माहात्म्य भूले और याको साधारन जानें, तब आलस्य होय, आलस्य तें अज्ञान होय, अज्ञात तें दुर्बुद्धि संसाराशक्ति होय संसाराशक्ति ते श्री ठाकुरजी तें बहिर्मुखता होय, यह कहे जो सेवा दर्शन और जप पाठते कहा होयगो, और लौकिक बिना निर्वाह कैसे होयगो और वैष्णव मिले तो पाखंड करिके कहे जो सेवा दर्शन में कहा है और मन लगेगो तब कार्य होयगो सो वे तो योंहि पचिमरत हैं, सो या प्रकार सिद्धांत करि लौकिक में तत्पर होय, और मन है सो भगवद् सेवा कीर्तन वार्ता करवे में लगेंगे, परन्तु जीव की उल्टी गति है, ताते भगवद् धर्म में मन

लगत नाहीं, सो याही प्रकार दुष्ट सिद्धान्त ते श्री ठाकुरजी अप्रसन्न होत हैं और भगवद् धर्म को एसो साधारण न जाने, अलौकिक जाने और यह कहे जो, मेरी लौकिक देह तासों श्री प्रभु कृपा करिके अलौकिक सेवा करावें हैं और लौकिक जिह्वाते भगवद् नाम निकसत हैं सो बड़ी श्री महाप्रभुजी की कृपा ते प्राप्त भयो हैं। लौकिक तो सघरी योनि में सिद्ध होत आयो हैं, और प्रभु के स्वरूप को दर्शन सेवा स्मरण जप पाठ तो परम दुर्लभ है, सो यह माहात्म्य जाने तब प्रीति होय, या प्रकार श्री गोकुलनाथजी कल्याण भट्ट प्रति वैष्णव को शिक्षा दिये हैं।

।। इति श्री गोकुलनाथजी कृत सोलहमो वचनामृत सम्पूर्णम् ।।

卐 वचनामृत सत्रहमों 卐

अब श्री गोकुलनाथजी सप्तदशमो वचनामृत कहत हैं-सो वैष्णव होय सो या प्रकार पुष्टिमार्ग को सर्वोपरि जानें, तब पुष्टिमार्ग में रुचि होय, सर्वोपरि मार्ग कब दीसे ? जब पुष्टिमार्गीय अनन्य भगवदीय को संग होय दैन्य भावसों भगवदीय के कहेको विश्वास के कहेको विश्वास होय, तब फल सिद्ध होय और भगवदीय को लौकिक न जाने, जो भगवदीय के हृदय में प्रभु बिराजे हैं और भगवदीय की देह इन्द्रिय, मन अलौकिक हैं सो उनके संग ते यह अलौकिक होय, सो अलौकिक कैसे जानिये ? जो दुःख में विवेक, धैर्य, आश्रय दृढ़ होय, और काहूतें कपट, छल, निंदा काहु कों बुरो न चीते और चोरी तथा विषय लौकिक न करे, जो कोई संजोग पायके होय जाय तो बहुत खेद पावे।

ऐसे भगवदीय को संग सदा करनो, जैसे श्री ठाकुरजी के दर्शन ते पवित्र होय, ऐसे भगवदीय के दर्शन ते पवित्र होय, भगवदीय को संग होतही मनमें आनन्द तथा भगवद् धर्म की स्फूर्ति होय, और भगवदीय की सेवाते श्री ठाकुरजी बहुत प्रसन्न होय, और भगवदीय के संगतें, असमर्पित अन्याश्रय छूटे, असमर्पित लिये तें आसुरावेश होत हैं, अन्याश्रय तें वैष्णव धर्म पतिव्रत जात हैं, जैसे व्याभिचारिणी होत है ताको भ्रष्ट जाननो, पुष्टि मार्ग में अंगीकार न होय, अनेक मायाके दुःख पावे और वैष्णव को अपने अर्थ उद्यम न करनों और मन में यह विचारनों जो व्योहार किये तें प्राप्ति होय, तो वैष्णव सेवा, गुरु सेवा में कछु अंगीकार हो, सो यह भाव राखें, तो लौकिक व्योहार बाधक नाहीं होय, अपने कुटुम्बको भरण पोषण चल्यो जाय और भगवद् धर्म बढ़े और व्यवहारहु अलौकिक करें, अनिषिद्ध सत्यको करे, और वामे हूं सघरो दिन पच्यो न रहे, राजभोग पाछे उत्थापन के भीतर इतने पें करे, सो इतनेही में आवनहार होयगो सो प्राप्त होयगो, सो सेवा दर्शन नियमसों करें और बहु द्रव्य कमावे तो अपने घर श्री ठाकुरजी तथा गुरुनको पधरावे और वस्त्र आभूषण भेट करे, और अलौकिक मनोरथ में चित राखें, और नाना प्रकार की सामग्री करि के श्री ठाकुरजी को आरोगावें, ता पाछे वैष्णव कों महाप्रसाद लिवावें, और द्रव्यकों संकोच होय तबहु श्री ठाकुरजी के पात्र तथा आभरन वस्त्र इनमें अपनी सत्ता न जाने, या प्रकार अपराधतें डरपत रहे और धीरज राखे, यों न जाने जो राजा कुटुम्बको भय राखिकें अपने गुरुके घर पधराइये

तो सुख होय तो वैभव बढावनो नहीं, और नाना प्रकार की सामग्री भोग धरि पाछें वैष्णवकों महाप्रसाद लिवावें, तामें द्रव्य की सफलता होय। तातें कोई बात को दुःख न पावे, छिन-छिन में प्रभुनको नाम स्मरण करनो, और मन में दयाभाव राखनों, अहंकारादिक मनमें न राखनों, या प्रकार श्री गोकुलनाथजी कल्याण भट्ट प्रति कहे हैं।

।। इति श्री गोकुलनाथजीकृत सप्तदसमो वचनामृत सम्पूर्णम् ।।

卐 वचनामृत अठारहमों 卐

अब श्री गोकुलनाथजी अठारहमों वचनामृत कहत हैं :- जो जहाँ अपने मार्ग की निंदा तथा श्री वल्लभकुल की निंदा अपने पुष्टिमार्ग की निंदा, वैष्णव की तथा धर्म की निंदा होय ऐसे दुष्ट जीव के पास कबहु न बैठिये, और अवश्य कारण पायकें मिलाप होय तो अपने पुष्टिमार्ग की चर्चा वार्ता करनी नहीं और कोउ चलावे तो वाहि गोप्य करि राखें, सो तहाँ प्रकाश न करें, प्रकाश करें तो अपराध पड़े, सों कानतमें निंदा सुने तें यह शास्त्र में कहे हैं जो अपने प्रभु की निंदा सुने अथवा करे तो ताकी जीभ काटि लीजे, और अपनों वश न होयतो तहाँ ते भाजि जानों परन्तु कान सों सुने नहीं, जैसे हरिदास ने जेमल को शिक्षा दीनी, सों जहाँ ताँई ऐसे बहिर्मुखसो मिलाप न करनो, जो बहिर्मुख होय सो एतन्मार्ग की निंदा करे और आछो ब्राह्मण पंडित होय, वा अच्छो क्षत्री होय, परन्तु एतन्मार्गको विरोधी होय, तो वह बहिर्मुख है, और वो यों ही जात है, और एतन्मार्ग में अत्यन्त

श्रद्धा हैं, ताकों दैवी जीव जाननो, सो दूसरे जन्म में शरण, आवेगो, जो जीव पुष्टिमार्ग में तो आयो, परन्तु याको पुष्टिमार्ग को फल नाहीं होय और शरण प्रताप तें मुक्तिमार्ग को तो पावेगो, और संसारी है और एतन्मार्ग में प्रीति है, साधारण हैं सो तिनसों लौकिक वैदिक कार्यार्थ मिलनों और एतन्मार्ग के द्वेषी को सर्वथा त्याग करनों या प्रकार श्री गोकुलनाथजी कल्याण भट्ट प्रति कहे हैं।

॥ इति श्री गोकुलनाथजीकृत अष्टादशमों वचनामृत सम्पूर्णम् ॥

卐 वचनामृत उन्नीसमों 卐

अब ओरहु श्री गोकुलनाथजी कल्याण भट्ट प्रति उन्नीसमों लक्षण कहत हैं- जो वैष्णव होय के भगवदीय पास आवे तो वाके संशय दूरि करि पुष्टिमार्गीय भगवद् धर्म बढावे, सुगम उपाय बतावे, तातें वैष्णवको मन बढ़े सो नवरत्न में कहत हैं "अज्ञानादथवा ज्ञानात्कृतमात्मनिवेदनम्" सो अज्ञान करिके शरण ही आवे सो शरण आये तें जीवको सर्व कार्य सिद्ध होय है, और कहे हैं जो "निवेदनं तु स्मर्तव्यं सर्वथा तादृशैर्जनैः" सो शरण आये पाछे वैष्णवको संग करे तब ज्ञान होय, ता पाछे ताप क्लेश समझे, और प्रथम कठिन उपाय कहेतो शरण आयवे में जीवको बड़ो सन्देह पड़े, तातें क्रम क्रमसों सेवा स्मरण तथा लीलाकी भावना ताप स्नेह बढ़ावे और अनन्य भगवदीयको अपनों हितकारी जाने, और पुष्टिमार्गसों विपरीत धर्म बतावें ताको अपनो शत्रु जाननो, तातें प्रेमदिसा बारे को संग करनो,

और सत्संग बिना या काल में दुःसंग बहुत मिलत हैं, सो या करिके भगवद्धर्म को नाश होय है, सो या काल विषे अनेक प्रकार के प्रतिबन्ध आयके पड़त हें, तासों सत्संग होय तो भगवदधर्म बढ़े, नहीं तो अन्याश्रय होय जाय, या प्रकार श्री गोकुलनाथजी आज्ञा किये हैं।

।। इति श्री गोकुलनाथजीकृत उन्नीसमों वचनामृत सम्पूर्णम् ।

卐 वचनामृत बीसमों 卐

अब ओरहु श्री गोकुलनाथजी आज्ञा करत हैं जो भगवदीय को मन लगाय के भगवद् सेवा करनी, और फिर राजभोग पाछें एकान्त में दोय चार घड़ी, जैसों सौकर्य होय तितनी मानसी सेवा करनी, और नखते शिख पर्यन्त सगरें श्रृंगार को ध्यान करनों, सो न्हाय के मंदिर में जायकें मानसी रीतिसो ऋतु सामग्री करि आरोगावनो, सो राजभोग पर्यन्त सब भावना करें ता पाछें महाप्रसाद लेय। और वैष्णव आयो होय तो प्रथम उनको महाप्रसाद लिवावे। ता पाछें मानसी करि आप महाप्रसाद लेय या भाव सों उत्थापन से सैन पर्यन्त भावना करनी और पाछे कुंज की भावना करनी, सो अत्यन्त दुर्लभ है, और अपनों मन लौकिक आसक्ति में होय तो न करनो, और यह कहे जो महाप्रभुजी आपनों दास जानिके कृपा करेंगे, या प्रकार की भावना करनी, तातें भावना में प्रथम प्रभुन के श्रृंगार में मन लगावे, और जन्म जन्म की अविद्या करिकें भगवान स्वरूप में मन लागत नाहीं, सो श्रृंगार में तो अद्भुत् छवि देखिकें मनको श्रृंगार करे, तब कार्य होय तब कल्याणभट्ट प्रश्न कियो,

जो महाराज, श्रृंगार को कछु बखान करिये, सो अब श्री गोकुलनाथजी श्रृंगार को वर्णन करत हैं, जो प्रथम तो श्री ठाकुरजी के चरणारविन्द में मन लगावे सो परम कोमल सुकुमार तिनमें सोलह चिन्ह हैं, और प्रथम बड़के पत्र आरक्त होय तैसे वामचरण पुष्टि, दक्षिण मर्यादा तिनमें दश नखन की कांति चन्द्रमावत् ताप हारि तिनमें नुपुर आदि नख भूषण जडाऊ, ताके उपर जेहरि पायल झांझर, कड़ा, साँकलाँ आदि, ताके ऊपर गुल्फ सुन्दर, तापे घुंघरू, तापर जंघा कदली, स्तंभवत् और कटि केसरिया, तापर किंकिणी तथा पीताम्बर, धोती, सूथन और त्रिवली और हृदय विशाल ता उपर चौकी, पदक धुकधुकी, चम्पाकली बन्धी है, और वैजयन्ती माला, मोतिन की माला, कदम्ब के कुसुमन की माला, तापर कंठसरी, सांकलां, पगलाँ, भुज में बाजुबन्ध जडाऊ फोंदना, श्याम बलय, पोहोंची, कंकण, हस्तफूल, नखावली १०, और श्रीहस्त, तामें लाल मुरली, तापर नगर जड़ाऊ, ताके पाव चिबुक, हीरा के आभूषण और अधर नीचे मन्दहास्य दन्त कांति कोटि बिजलीवत्, या भाँति आगें आरक्त मुख, और नासिका में बेसरको मोती, दोउ नेत्र में लावण्य कटाक्ष, पाँच प्रकार की चितवनि, मनहरण, दोउ भृकुटी काम धनुवत्, सुन्दर भालपर कुंकुम, तथा केसर कस्तूरी को तिलक, भोंह पर कुंडल, मकराकृत, मयूराकृत कर्णफूल, ऊपर कणिका लसत, मस्तक ऊपर मुकुट कुलह, टिपारो ग्वालपगा, भाँति भाँति के रंगन के जड़ाउ, मणिमाला गुंजा और चरणारविन्द में तुलसी गन्ध, दोउ और दामिनीवत् और भक्त अनेक प्रकार की लीला करें या प्रकार

मन में स्वरूपासक्ति को बारंबार विचार करें, तब सहज में ध्यान हृदे में ते न टरे, तब लीला की भावना होय, और नाना प्रकार की सामग्री तथा कुंज के उत्सवादिक को सामग्री करें, भावना करे, या प्रकार मानसी करि दण्डौत करे, तब प्रभु कृपा करिके हृदय में पधारें, तब लौकिक में ते देह छूटि अलौकिक में लगे, तब रोमांचित होयकें रुदन करें, या प्रकार प्रेम की दशा होय, ताके भाग्य को पार नाहीं, सो या प्रकार श्री गोकुलनाथजी कल्याण भट्टसों आज्ञा किये हैं।

।। इति श्री गोकुलनाथजी कृत बीसमों वचनामृत सम्पूर्णम् ।।

卐 वचनामृत इक्कीसमों 卐

अब श्रीगोकुलनाथजी कल्याण भट्ट प्रति इक्कीसमों वचनामृत कहत है - जो वैष्णव संयोग को स्मरण करि आनन्द पावे कबहु विरह करि दीन भाव को प्राप्त होय, यह दैन्यता फलरूप है, दैन्यतातें, संतोष होय, तातें श्री ठाकुरजी अति प्रसन्न होय और जब निःसाधन होय तब यह विचारिये :-

चित्तेन दुष्टो वचसापि दुष्ट, कायेन दुष्ट क्रिययापि दुष्टः।
ज्ञानेन दुष्टो भजनेन दुष्टो ममापराधः कतिधा विचार्य॥

या प्रकार अपने को समाधान करि, हीन जानि मनमें प्रभु को दास भाव राखे, और अपने स्वरूप को बारम्बार विचारनों जो में कौन गिनती में हूं और मेरी देह मलमूत्रसों भरी है, और जितनी वस्तु सब खोटी कही हें तितनी मेरी देह में हे, सो औरतों में कहाँ देखू सो हाड मांस चर्म थूंक की भरी है, अनेक द्वार

करिकें मल बहत है, एसो जो में महादुष्ट अज्ञानी हूं और काम क्रोध, मद, मत्सरता सो भर्यो हूँ, और मोहरूपी बेडीसों बंध्यो हूँ, अनेक दुःख संसार में भोगत हूँ, सो एसो जो में, तो मोकूं संसार में कहुं ठिकानो नहि है, और श्री आचार्यजी परम दयाल हैं, सो मोसे पतितको शरण लीयो है। सो में पुष्टिमार्ग में शरण आयो, नातर मोको तो नरकमें हुं ठिकानों नहीं हतो, तातें श्री आचार्यजी ने परम कृपा करिके शरण लैके अपनो पूर्ण पुरुषोत्तम को संबंध करायो है, सो अब मोको यह कर्तव्य है, जो दृढ़ता करिकें श्री पुरुषोत्तम के चरणारविन्द में मन लगायकें रहनो, और कोटानकोटि जुग भ्रमत महा दुखित भयो हूं, ताते संसार में तें मन काढ़िके प्रभुन के चरणारविन्द में मन लगाऊं, या प्रकार अपने छिन छिन में सम्हारे तब दीनता उत्पन्न होय, और सब वस्तु में भगवद् इच्छा जाने और उद्यम होय सो करे, और जामें धर्म जाय सो न करनों और धर्म गयो सो सब गयो, और सगरो स्वार्थ गयो, और अपनी खरी मजूरी होय, ताको श्री ठाकुरजी अंगीकार करत है, यह अपने मन में निश्चय करे, जो कोई श्रीठाकुरजी को नाम लैके वस्तु लावे, और श्री ठाकुरजी को समर्पे नहीं और तामें ते खानपान करे तो पातकी होय और श्रीठाकुरजी की वस्तु अपनें खान-पान में लावे, और भगवद् धर्म बेचिके लावे तो सगरो भगवद् धर्म नष्ट होइ जाय, एसें ही कीर्तन करि के देह निर्वाह चलावे, और भगवद् धर्म को प्रगट करि अपनो निर्वाह चलावे, और गृह को पोषण करे, तो ताको कछु भगवद् धर्म फल न होय, और संसार में संसारी की रीति होय तैसे चले और काहू को बुरो

हु न करे, और लोग जाने जो केवल संसारी हैं, जहाँ एतन्मार्गीय वैष्णव मिले तब भगवद् धर्म की चर्चा वार्ता करे, और वैष्णव के आगे अपनी बडाई तथा अपनो पुरुषार्थ न करे, जो में ही कमात हूँ तातें मेरो गृहस्थाश्रम चलत है, ऐसे विचारे जो प्रभु बड़े हें सो सबकों पालन पोषन करत हें, ज्ञान मार्ग में साधन में कष्ट त्याग दृढ़ होय, तब उद्धार होय, और पुष्टिमार्ग में या प्रकार चले तो गृहस्थी को उद्धार होय है, सो संसारी के उद्धारार्थ यह मार्ग है, तामें त्यागी विवेकी होय तो कहा कहेनो, यह ज्ञान तादृशी भगवदीयतें होय, याको दूसरो प्रकार नाहीं है, या प्रकार श्री गोकुलनाथजी वैष्णव को आज्ञा किये हैं।

।। इति श्री गोकुलनाथजीकृत इक्कीसमों वचनामृत सम्पूर्णम् ।।

卐 वचनामृत बाईसमों 卐

अब औरहु श्री गोकुलनाथजी कल्याण भट्ट प्रति आज्ञा करत है - जो वैष्णव को मिथ्या भाषण सर्वथा नहीं करनों, क्योंकि झूठ बराबर पाप नहीं है, जो राजा युधिष्ठिर ने इतनो कह्यो "जो नरो वा कुंजरो वा अश्वस्थामा मर्यो" सो इतने ही पापते नर्क को दर्शन करनों पर्यो, सो मन में बहुत दुःख पायो, सो तामें पड़े ताके दुःख को तो पार नाहीं, ताते मिथ्या भाषण को महापाप है, और श्री ठाकुरजी की रसोई जाके ताके हाथसों न करावनी, अपने हाथसों पवित्रतासों करनी, और रसोई को कार्य दुःखरूप न जाननों, जो मोको श्रम होयगो, कैसे करूं, धुंआ नहीं सह्यो जात है, और या पुष्टिमार्ग में तो श्री ठाकुरजी की रसोई की

टहल परम उत्तम है, जहाँ ताँई अपनो शरीर चले तहाँ ताँई ओर के हाथ रसोई न करावे, सेवा श्रृंगार तो करावे, परन्तु रसोई तो अपने हाथसों ही करे, और रसोई की अपरस न्यारी राखे, ताको उत्तम भगवदीय कहिये, और शरीर न चले तो अवश्य आय पड़े तो ओर के हाथ करावें, परन्तु मन में ताप राखे और रसोई करिके आप ही खाय के न बैठि रहे, यासूं दोष लागे, तामें प्रथम वैष्णव को लिवावे, ता पाछे आप लेय, और वैष्णव को मुख्य करि दास भाव राखे, और दास तो ताको कहिये जो वैष्णव की झूंठिन खाय, और मार्ग की तो यह मर्यादा है, जो श्री ठाकुरजी की तथा श्री वल्लभकुल की झूंठिन खाय, इन बिना ओर की खाय तो भ्रष्ट होय जाय, या धर्मसो उपर वैष्णव की झूंठिन लैवेकी कही ताको निराकरण करत हें, जो मुख्य तो ब्रजभक्तन को स्वरूप गाय हे, सो गायकों प्रथम महाप्रसाद खवावे और वैष्णव को खवावे, ता पाछें यह सगरो महाप्रसाद वैष्णव को झूंठिन भयो, और वैष्णव की सामर्थ्य न होय और अपनों कार्य जैसे जैसे चलावत होय तो गाय को भाग तो अवश्य देई और यह रसोई करे है, तब गाय, पृथ्वी, मनुष्य, देवता पितृ ये सब आशा करें हैं, सो जब गाय को ग्रास काढ़े तब ये सघरे तृप्त होय जाँय, तातें गाय को भाग अवश्य काढ़नों, जो यह वैष्णव और मनुष्य मात्र को धर्म है, और श्री ठाकुरजी की सामग्री में अपनो मन चलावनो नहीं, और कदाचित् चलावे तो महापापी होय, और श्री ठाकुरजी आरोगे नहीं और सिद्ध सामग्री काहुको दिखावनी नहीं और श्री ठाकुरजी के लिए फल

फूल सामग्री करी होय तो तामें तें, स्त्री, पुत्रादिक कों काहुको दिखावनों नहीं जो लौकिक प्रीतितें काहुको देय, और लेय तो बर्हिमुख हो जाय, और याकों धर्म जाय, श्री ठाकुरजी अंगीकार न करें, ताते भगवत् सेवा हे सो गोप्य है सो काहुंको जतावें नहीं, जो सेवा प्रगट करि अपनी प्रतिष्ठा बढ़ावे ताको पाखंडी कहिये, सो ताकी सेवा में कछु पुष्टिमार्ग का फल नाहीं, और पाखंड करिवेवारे के हृदय में लौकिक आवेश, आवें, सो लौकिक आवेशतें बहिर्मुख होय, और सेवा में प्रतिबन्ध परे, जो पाखण्ड को सार मूल लोभ है, सो जब लोभ छूटे तब पाखण्ड न होय, और लोभ के लिए जगत में पाखण्ड करत है सो वह पाखण्डी होय, ताको अन्याश्रय होय जाय, ताकरि के लोभ के वश ते ज्ञान विवेक को फल जात रहे, सो एसे लोभी पाखण्डी के हृदय में श्री ठाकुरजी कबहु न बिराजे, तातें सेवा थोरी ही करे, यथा शक्ति करे, ताको कछु बाधक नाहीं, सो थोरे ही भगवद् धर्मसों वाके सघरे कार्य सिद्धि होय जाँय और बहुत करे और पाखण्ड सहित होय तो भगवद् धर्म न बढ़े, तातें अलौकिक रीतसों सेवा करे, सो श्री ठाकुरजी के जानिवेसूं कार्य होयगो जो लोगन के जाने ते कछु सिद्ध होय नहीं, और वैष्णव को यह धर्म है, जो उत्तम सामग्री होय सो श्री ठाकुरजी को समर्पे और अपने पास द्रव्य न होय तो मन में ताप करिके कहेजो यह तो प्रभुन के लायक है, और जहाँ ताँई बने तहाँ ताँई उत्तम सामग्री तथा नौतम वस्त्र और फल फूल थोरोहु बने तो अवश्य लावनों, सो मेहेंगे-सेंगे को विचार नाहीं करनों, श्री

ठाकुरजी कुं तो स्नेह अत्यन्त प्रिय है, सो श्री ठाकुरजी को उत्तम वस्तु जहाँ ताँई बने तहाँ ताँई अंगीकार करावनों, और श्री ठाकुरजी को सुगंधादिक अत्यन्त प्रिय है, सो यथाशक्ति समर्पे, और सुगन्ध नित्य न बने तो उत्सव में समर्पे, द्रव्य के अभावसो श्रुतिदेव ने मृतिका में पानी डार के सुगन्ध के भावसों प्रभु को समर्प्यो हुतो, सो ऐसे भावतें सघरी बात सिद्ध होय, और श्री ठाकुरजी को तुलसी अत्यन्त प्रिय है, सो श्रीठाकुर जी के चरणारविन्द में नित्य नेमसों विधिपूर्वक समर्पनो, और तुलसी समर्पती बिरियां गद्यको पाठ करनों, सो श्री ठाकुरजी के चरणारविंद को संबंध श्री आचार्यजी महाप्रभुजी द्वारा भयो है, तातें श्री आचार्यजी महाप्रभुजी को सर्वोपरि जानें, और तुलसी है सो वृन्दा को स्वरूप है, पतिव्रता है और मध्य तुलसी के बीज जो है, तातें दृढ़ संबंध भयो जाननो तातें तुलसी चरणन में समर्पनो, तब जा दिन जा समय श्री ब्रह्मसंबंध भयो ता समय अपने गुरु के सनमुख जो श्री ठाकुरजी है तिन को स्वरूप अपने श्री ठाकुरजी में जानि समर्पे, काहेतें जो यह चरणारविंद को दृढ़ संबंध भयो है, सो चरणस्पर्श करे तें प्रीति बढ़े, और प्रभु के चरणारविंद में भक्ति है, सो भक्ति की वृद्धि होय और या प्रकार विचारे जो कहां भक्तिरूपी चरणारविंद अलौकिक, और मेरो हस्त लौकिक, परन्तु श्रीआचार्यजी महाप्रभुजी की कृपा सें यह पदार्थ प्राप्त भयो है, और प्रभु मोकों चरण स्पर्श करायो है, तहाँ पूतना मोक्ष में श्री आचार्यजी लिखे हैं, जो पूतना ने सोलह हजार बालकन के प्राण लिये, सो पूतना को प्रभु ने दुष्ट भावतें

मोक्ष कियो, बालकहु भक्तभावसों श्रीठाकुरजी के हृदय में रहे, सो श्री ठाकुरजी ने यह विचारी जो सोलह हजार भक्त हैं सो तिनकूं पूतना राक्षसी के संगतें आसुरावेश भयो है, सो यद्यपि जगदीश श्री ठाकुरजी के हृदय में है, तोहु मिट्यो नहीं तातें भक्तिरूप चरणारविंद को संबंध होय, तब आसुरावेश मिटे, सो यह विचारिकें ब्रह्मांडघाट की मृतिका खाइ, बाल चरित्र दिखाये, सो उन भक्तन के अर्थ आप मुख में माटी खाये तब ये ऊपर को चरित्र दिखाय ब्रज के बालक तथा वेदरूप श्री बलदेवजी इननें श्री यशोदाजी तें कह्यो जो श्री ठाकुरजी ने मृतिका खाई है, इतनी सुनिके श्री यशोदाजी श्री ठाकुरजी के पास आई और डरपाय के कही जो श्री ठाकुरजी सांची कहो जो तुमने माटी क्यों खाई है। तब श्री ठाकुरजी ने कह्यो जो "मैया मैंने माटी नहीं खाई है," सो यह लीला करि अपनी पुरुषोत्तमता बताई, सो श्री बलदेव जी ईश्वर है, तोहु जाने नांहि, जो जितनो प्रकार श्री ठाकुरजी जतावे तितनो जानें, तब श्री यशोदाजी को मुख खोलि ब्रह्मांड दिखायें, सो यह मृतिका का प्रसंग अत्यंत गोप्य है, सो या प्रकार चरणामृत देकें सोलह हजार बालक पूतना के शुद्ध किये, ता पाछें व्रतचर्या प्रसंग में चीरहरण लीला कीनी सो चीर दैकें चीर द्वारा इनमें पुंभाव को स्थापन किये, तब रास की अखंड रात्रि देखिवे की योग्यता भई, सो अलौकिक रात्रि दिखायै और वरदान दिये जो शरद में रासलीला में दान होयगो, काहेतें जो चरणारविंद के संबंधते भक्ति सिद्ध भई है, तातें चरणामृत लेनों, और तुलसी चरणारविंद

पें समर्पनी, और चरणस्पर्श करनो, या प्रकार नियम राखें, तब भक्ति बढ़े, तब पुष्टिमार्ग के फलकी प्राप्ति होय, और तुलसी है सो जितनो भगवद् धर्म में प्रतिबन्ध है, तितनों सब दूर करि अलौकिक देह की दाता है, और तुलसी को अलौकिक स्वरूप है, कहें हैं जो पुष्टिमार्ग में मुख्य श्री स्वामिनीजी बिना रंचक फल की प्राप्ति नहीं है सो तुलसी स्वामिनीजी के श्रीअंग की गंधहे, तातें श्री ठाकुरजी को अत्यन्त प्रिय है सोः-

प्रियांगगंधसुरभि तुलसी चरणप्रिये।
समर्पयाम्यहं देहि हरेर्देहमलौकिम्॥१॥

सो या भाँतिसों तुलसी बडो पदार्थ है, और पतिव्रता पार्वती, जानकी इत्यादिकन की आधिदैविक पतिव्रता है, सो गोविंदस्वामी गाये हैं -

श्री अंग प्रभृति जेती जगजुवती।
बार फेरिडारो तेरे रूप पर॥१॥

या प्रकार अलौकिक भाव जानि तुलसी समर्पे, और वृन्दा रूप तो मर्यादा मार्ग की रीति सों सब जगत में दिखाये है, और जा दिन श्री ठाकुरजी की सेवा चरणस्पर्श न बने, ता दिन को जाननों जो आज दिन मिथ्या, गयो, सो यह भाव अत्यन्त दुर्लभ है, और दासभाव राखिकें प्रभु की टहल करनी तातें प्रभु प्रसन्न होय, और स्नेह तो अत्यन्त दुर्लभ है और स्नेह बिना सघरी क्रिया वृथा जाननी एसो स्नेह बड़ो पदार्थ है, सो या प्रकार सों भगवद् सेवा को नियम, अपने पुष्टिमार्ग को धर्म भगवदीय सो मिलिकें पालनों, और दुःसंग में अपनो धर्म जायवे में भय हो,

और सत्संगते सदा भक्ति होय, और धर्म गयो तब सब पाप रूपक भयो, तातें भगवदीयतें प्रीति सहित मिलाप राखें, तातें याको कल्याण होय, या प्रकार श्री गोकुलनाथजी कल्याण भट्ट प्रति वैष्णवन को शिक्षा दिये हैं।

।। इति श्री गोकुलनाथजीकृत बाईसमो वचनामृत सम्पूर्णम् ।।

卐 वचनामृत तेइसमों 卐

अब औरहु श्री गोकुलनाथजी कल्याणभट्ट प्रति कहत है-जो वैष्णव को सखडी, अनसखडी को विचार राखनों और न समझत होय तो पुष्टिमार्गीय भगवदीययों रीति भाँति पूछनी, और वैष्णव को सामग्री में और महाप्रसाद में विचार राखनों, जो सामग्री में श्री ठाकुरजी की सत्ता जाननी, महाप्रसाद में वैष्णव की सत्ता जाननी, अपनी सत्ता न जाननी, सामग्री की सेवा पवित्र होय, खासा जलसों हाथ धोय विवेक विचार सहित र्स्पश करे, अच्छो भावनीक वैष्णव होय ताके हाथ सिद्धि सामग्री दिवावनी, तथा टहल करवावनों और जहाँ ताँई बने तहाँ ताँई सिद्ध सामग्री को कार्य आपुही करनों और जो शाकादिक की सामग्री बजारतें मंगवावें सो नामधारी बिना काहुपे न मंगावे, और जो बने सो छोटी मोटी सेवा आपु ही करे, और कुटुम्ब में तें जाकी अत्यन्त प्रीति होय ताके पास करावे। आप पवित्रता में रहे और पवित्र ही कार्य करे, और रसोई शुद्ध पोत के राखे, और राजभोग पाछें पात्रादिक मांजि के धरे, और सखड़ी में बड़ी पवित्रता राखे, सो एक-एक से छुइ न जाय, और

अपवित्रता से बुद्धि की हीनता होय, तातें मलिनतासों न रहनों, और बहुत मैले वस्त्र न राखनो, सो काहेते जो वैष्णव के पास वैष्णव बैठे तब भगवद् चर्चा वार्ता करे, तहाँ सर्वथा प्रभु पधारे सो तिनको उन वस्त्रन में सो बास आवे सो यह भाव जानिकें वस्त्र उज्जवल राखें और भगवद् मंदिर में आपुकों जानों परे, तब ग्लानि आवे, तातें फटे मोटे की कछु चिंता नहीं, अपने देह के अर्थ जैसो बने तैसो पहरे परन्तु बहुत मैलों न राखे और अपने देह के अर्थ काहु के दिखायवे के अर्थ आछो कपड़ा नाहि पहिरे, यह दास को धर्म है, और सूकर, शयाल, गर्दभ, कुत्ता, धोबी, नीच जाति, चाँडाल, भंगी, चमार, आसुरी सूतकी, रजस्वला, छापकी, (गरोली) सर्प, इत्यादिकन को छुवे तो तत्काल न्हाय डारे, और छीवे के स्पर्शतें दिन में ही न्हाय, रात्रि को छुयो रात्रि में न्हाय, यह वेद स्मृति शास्त्र में कह्यो है, और महाप्रसाद उत्तम ठोर को लेय, या प्रकार आचार विचार सु रहे, और या प्रकार पुष्टिमार्ग की रीति में न समझें तो भगवदीय वैष्णवतें पूछ्यो चाहिये, और उत्सवादिक को लोप न करनों, क्योंकि, जब उत्सव आवत है, तब श्री ठाकुरजी को परम आनन्द होत है, जो फलानों उत्सव आवत है, और श्री ठाकुरजी को उत्सव न करावे, तो श्री ठाकुरजी अप्रसन्न होय जाय, तातें उत्सव यथाशक्ति सर्वथा करनो सो विधि पूर्वक करनो और मन में दुःख पाय के न करनो और काहु के आगे अपनी बढ़ाई न करनी, जो मैंने उत्सव कियो और लौकिक वैदिक कार्य आय पड़े तोहु उत्सव टारनो नहीं, अपने ओर

कार्य आय पड़े तो वैष्णव के घर तथा अपने घर वैष्णव पास करावे, सो लौकिक कार्य अर्थ अलौकिक श्रीठाकुरजी को उत्सव टारे तो श्रीठाकुरजी कुढ़े और जीव के उपर अप्रसन्न होय, तातें अलौकिक कार्य में मन राखे, और लौकिक वैदिक आवश्यक होय सो करे, और पुत्रादिक को व्याह करे, तब मर्यादी होय तहाँ तिनके घर पुष्टिमार्ग की रीति सों महाप्रसाद लेय और अन्य मार्ग की रीति होय तो महाप्रसाद न लेनो, और लौकिक कार्य करनों होय, तो श्री ठाकुरजी को वस्त्र सामग्री पहले करनी और लौकिक को कार्य पाछें करनों और नात जिमामनी होय तो प्रथम श्री ठाकुरजी की सामग्री करे, पाछें श्री ठाकुरजी को भोग धरें, ता पाछें वैष्णव को लिवावें और वैष्णव को लिवायें श्रीनाथ की तथा गुरून की यथाशक्ति भेट काढ़े, और श्राद्धादिक में वैष्णव को न लिवावे, और सदा जाके घर लेत होय सो ता भांतिसों लिवावें, और लौकिक भावतें ब्राह्मण और जाति को लिवावे, और अलौकिक कार्य में वैष्णव को करे, तहाँ ओर के करे को प्रयोजन नहीं, और लौकिक में कोई जाति को बुरो माने तो वाकों प्रसाद दैके प्रसन्न करें, तातें अपने मार्ग की निंदा न करावे, सो काहेतें सो सुदृढ़ भक्ति वारे को तो कछु लौकिक, वैदिक सोहाय नहीं, वाको तो केवल अलौकिक ही ते काम है, या प्रकार सो रहनों, और जहाँ ताँई भक्ति दृढ़ नहीं भई है, तहाँ ताँई यह जाने जो मेरी भक्ति में कोई प्रतिबन्ध न करे, और लौकिक वैदिक करे तातें श्री ठाकुरजी की सेवा निर्विघ्नतासों करें, और मन में खेद होय सो न करे, और

पुष्टिमार्गीय सों कोई बात को अन्तराय न राखे, और कपट छल भगवदीय सों न राखें, और लौकिक वैदिक को कार्य हीन जानें, सो यह पुष्टिमार्ग को रीति सर्वोपर जाने, और इन इन्द्रियन को विषयादिकन तें श्री ठाकुरजी को आवेश जातो रहे और कहे है "विषयाक्रांतदेहानां नावेशः सर्वथा हरेः" सो या प्रकार करिकें श्री आचार्यजी महाप्रभुजी कहे हैं सो सेवा बराबर धर्म नहीं सो वैष्णव को बहुत कठिन है, और वैष्णव को विवेक विचारसों सर्व कार्य करनों, देश काल समय को विचार राखनों, बुरे के निकट न जानों और वासूं संभाषणहु न करनों, सेवा बने को उत्तम काल जाननों और व्रजभूमि को उत्तम ते उत्तम भूमि जाननों, जो जहाँ श्रीपुरुषोत्तम की नित्यलीला स्थिति है, और रात्रिकों शयन करनो तब प्रातःकाल की सेवा को स्मरण करनों, और श्रीठाकुरजी के श्री महाप्रभुजी के कीर्तन करि सोवनो, और कीर्तन न आवे तो, श्री महाप्रभुजी को, श्री गुंसाईजी को तथा गुरुन को स्मरण करिकें सोवनो, सो सबन के नामतें सघरो दिन खोटो खरो बोल्यो होय तो सब सुखरूप होय जाय, जैसे रात्रि को दूध लिये तें सगरे दिन को प्रसाद दूधवत् गुन करे, सोवत समय चरणामृत लेके सोवे तो वाको दुःस्वप्न नहीं आवे, और नींद तो मृतक बराबर है, तातें श्वास आवे तथा नहीं आवे, तातें चरणामृतकों संबंध मुख में बन्यो रहे, तो सर्वथा दुर्गति न पावें, या प्रकार सों वैष्णव या काल में सावधान होयकें रहे तब बचे, या प्रकार श्री गोकुलनाथजी कल्याणभट्ट प्रति कहे हैं।

।। इति श्री गोकुलनाथजीकृत तेइसमों वचनामृत सम्पूर्णम् ।।

#卐 वचनामृत चौबिसमों 卐

अब श्री गोकुलनाथजी चौबीसमों वचनामृत कहत है जो वैष्णवकों यह भय राखनों, जो मेरी भगवद् सेवा में अन्तराय न हो, यह भाव राखनों और सेवा के अर्थ लौकिक कुटुम्ब को, परोसी तथा राजा देश-काल को सघरो दुःख सहनों और जानन्नो जो यह दुःख है, सो तो देह संबंधी है सो कोई कहा करेगो, और भगवद् सेवा मोकूं चाहिये, और दुःख सुख तो जगत में जहाँ जायगो तहाँ याको सिद्ध है, परन्तु भगवत् सेवा तो बहुत दुर्लभ है, जब प्रभु अत्यन्त कृपा करें, तब भगवदीय को और सेवा को संयोग बने, और अपने मन में यह जाने जो जहाँ ताँई यह देह है तहाँ ताँई यह दुःख है और लौकिक दुःख सुख मेरे संग नाहीं है तातें दुःख, सुख पाय के सहन करे, और कहें जो यह सेवा मेरे जन्म जन्म को कल्याण करत है, तातें या जन्म में दुःख भयो तो कहा। परन्तु सेवा तो बनत है, और लौकिक वैदिक के लिये आपु न देश देशन में कितनों दुःख सहत हैं, सो तो तुच्छ पदार्थ है, यहाँ अलौकिक भगवत् सेवा है ताके अर्थ जो दुःख पावें तो आनन्द पायकें सहनों और भगवत् सेवा मन लगाय के करनों, और श्री ठाकुरजी की सामग्री तथा नेग बांधे, सो नेग रंचकहु घटावे नहीं, ताते अपनी सामर्थ्य देखिके नेग बाँधे, और नेग बाँधे पाछे न करे तो प्रभु नेग बिना दुःख पावें यह भक्तिमार्ग में नेग की प्रभु आशा करत है, सो लौकिक दृष्टांततें जाननों, जैसे कोई वैष्णवकों महाप्रसाद लिवावे, सों वाकों एक दिन घटतो धरें तो वह भूखो रहें, ता भावतें विचारिकें नेग बांधनों, और जो

कोई वैष्णव सेवा में चतुर होय तो वाको सेवा में राखनों और काहुकों सामग्री आछी आवे, कोई बीड़ी आछी बाँधी जाने, कोई सुन्दर माला गूंथ जाने और कोई सुगन्ध, अत्तर, फूलेल, अरगजा, चोवा और रीति भाँति जाने वाको सेवा में राखे, और कोई कुल्हे, टिपारो, वस्त्रन में बाँधि जानें तो तिनसों करावे, सो या प्रकार सों प्रीतिपूर्वक सेवा करे, और जामें गुण बहुत होय और प्रीति रंचकहु न राखे, तासूं कछु न करावे, और थोरो गुण होय, प्रीति तें करे तासों सेवा करावें, अपने को कछु गुण आवत होय, और कोई वैष्णव श्रद्धापूर्वक पूछे तो कहें, परन्तु ठौर ठौर आपते न कहत डोले, और अपने गुन को अभिमान न करे, प्रीति पूर्वक वैष्णव को बतावनो और आपतें नयो होय तो वाकों आछो जाननो, और आपुनतें प्रथम हुए वैष्णव की कानि राखनि और जाने जो ये वैष्णव है, और मोतें बड़ो बड़भागी है, और प्रभु ने इनको बालपने ते अंगीकार कियो है और भगवद् धर्म में छोटो बड़ो न जाने, कृपाकूं देखें, और काहु को शरण आवत ही आछी दिशा होत है, और काहु को जन्म व्यतीत होय जाय, तोहूं कछु न समझे तातें या मार्ग में बड़े छोटे को प्रमान नाहीं, जो यह मार्ग में तो कृपा ही को विचार है, और पुष्टिमार्ग में शरण आवे ताको सुजाति जाननो, और तें अपनो धर्म गोप्य राखनो, और जो वस्तु पुष्टिमार्ग में अंगीकार कीनी है ताही को समर्पे, सोइ महाप्रसाद लेय और तरबूजा, मूली, गाजर इत्यादिक निषिद्ध है, और वेद में हुं वर्जित हैं, ताते कबहु न लेय, और शास्त्र में बेंगनहुं निषिद्ध है, परन्तु या पुष्टिमार्ग में श्री जगन्नाथजी की आज्ञा

तें लीने है, ताते बेंगन भोग धरिके लेय और लोन डारो शाक कूं और खीरकू शास्त्र में सखड़ी में कहयो है, ताको अनसखड़ी की रीति सो करे, शाकादिक में अग्नितें उतारि के पाछे लोंन डार्यो चाहिये, थोरो बने तो चिंता नहीं, परन्तु पुष्टिमार्ग की रीतिसों करनों। पुष्टिमार्ग की रीत बहुत बड़ी है, दूसरे के मार्ग की क्रियासों कछु फल नाहीं है, सो श्री गीताजी में कहे हैं।

"स्वधर्म निधनं श्रेयः परधर्मोः भयावहः"

सो परायो धर्म भय उपजावे हैं ताते कछु कार्य न होय और अपने पुष्टिमार्ग में रीति प्रमान करे भले थोरोही करें, और श्री आचार्यजी महाप्रभुजी को आश्रय करे तो वा धर्म ते प्रभु प्रसन्न होय। उत्साहसों बने सो करे, काहुकी लौकिक प्रतिष्ठा देखि के बाकी बराबरी न करें, तब वामें श्री आचार्यजी की कानितें श्री ठाकुरजी प्रसन्न होय, और प्रभु प्रसन्न न होंय तब याको कियो कहा ? ताते प्रभुन को तो एक मन ही की अपेक्षा है, और श्री ठाकुरजी के तो कोई बात की घटती नाहीं, वैष्णव को जैसो भाव होय, तैसो अंगीकार करें, तैसोई दान करें, तातें वैष्णव अपनी योग्यता छोड़ि श्री आचार्यजी महाप्रभुजी को आश्रय करें, और लौकिक वैदिक में लोकनिष्ठा दिखाय अपनों धर्म गोप्य राखें, तहाँ लौकिक व्योहार बने तो करे जानों, तामें जो भगवद् इच्छातें आय प्राप्त होय तामें ते श्रीनाथजी को अंश प्रथम काढ़िये, तापाछें गुरुन को काढ़िये, दोउ थैली न्यारी करिके धरत जैये तथा गाम में कोई वैष्णव को पास धरत जैये, अपने घर द्रव्य को कबहुं न धरिये, सो कहा जाने कोई समय कैसी कठिनता आय

पड़े, तो छिन में धर्म छुटि जाय, यह द्रव्य कोई समय भगवत् धर्म को नाश करे, सो गाम में कोई प्रमाणिक वैष्णव होय ताके घर धरत जैये, जब श्रीजी को भेटिया आवे तब तत्काल दे देय, यह न जानें जो मेंही जाऊँगो, और गाम में गुरु होय तो भेट काढ़ि भेट करि आवे, और दूसरो गाम में हो तो हुंडी करिके पठावे, और कोई वैष्णव भरोसे को होय तो वाके हाथ पठावे, सो काहेते जो या काल में द्रव्य और परस्त्री ए भगवद् धर्म को नाश कर्ता है, सो श्री भागवत में हु कह्यो है, जो काष्ठ की पूतरी को संग न करनों, क्योंकि चित्र लिखि पूतरी को देखेतें मन में विकार होत है, तातें पराई स्त्री को सर्वथा त्याग करनों, और वाको कालरूप जाननों, और श्री गोवर्धननाथजी के तथा अपने गुरुन के दर्शन की सदा सर्वदा आरति राखनों और यह न जाननों जो में दोय चारि बेर होय आयो हुं, सो ज्यों ज्यों दर्शन करे त्यों त्यों अधिक ताप करनों, जाने जो दर्शन करवे को फल कृपा करिके दोनों है, और याही भांति श्री यमुनाजी के जल पान को हुं ताप राखनों और श्री गोवर्धननाथजी के टहेलवा व्रज में रहत है, तिनसों दोषभाव न राखनों, जो काहेतें कि वैदिक शास्त्र में कहे हैं, जो यह जगत श्री ठाकुरजी को क्रीडा भांड है, सो सघरो जगत काष्ठ की पुतरीवत् हैं, सो प्रभु उनको नचावत है, तैसे नाचत हैं, काहुको दोष न देखें, और आछी बात होय सो समुझावे, और न समझत होय तो भगवद् इच्छा जानें, तातें दोष बुद्धि न राखें, क्यों जो वे ब्रज संबंधी हैं, सो प्रभु विचारे बिना प्रभु के गाम में प्रभु के पास कैसे रहे। तातें उनको अलौकिक करि जानें, उनकी सेवा टहेल

बने सो करें, और आप उत्तम स्थल में अपराध को भय राखें, और ठौर के अपराध तो उत्तम स्थल में गये ते छूटें और उत्तम स्थल को पाप वज्रलेप होय जाय, सो कैसे छूटें तातें अपराध को सर्वथा भय राखें, सो उत्तम स्थल को भय राखिकें खोटी बात न करें और कानतें सुनेहु नाहीं तब भाव दृढ़ होय, तब प्रभु प्रसन्न होय, और श्री भागवत के एक दोय अध्याय को पाठ नित्य करनो, और एतन्मार्ग के ग्रन्थन की टीका को श्रवण करे बिना प्रभुन में मन लागे नाहीं, सो काहेते जो ग्रन्थ बिना पुष्टिमार्ग के सिद्धांत को न जानें, और वैष्णवन के मुखते सुने तब श्री आचार्यजी तथा श्री गुसांईजी के पुष्टिमार्ग के सिद्धांत सेवा क्रिया को सम्पूर्ण अलौकिक ज्ञान होय तब प्रीति बढ़े, और जब प्रीति उपजी तब याको सम्पूर्ण कार्य सिद्ध भयो, और श्री सुबोधिनीजी श्री वल्लभकुल बाँचे सो सुने, तथा निवेदनी के मुखतें सुने, सो लीला को भाव अपने हृदय में शुद्ध करिके राखे, काहेतें जो भगवद् माहात्म्य जाने बिना प्रीति न होय, और सुने बिना ज्ञान न होय, तातें भगवद् वार्ता श्रवण अवश्य करे, सो श्री आचार्य महाप्रभुजी नवरत्न में कहे हैं, जो हम निवेदन किये हैं, परन्तु भगवदीय के संग बिना, श्रवण किये बिना, ज्ञान न भयो तो प्रीति न होय, तो प्रभु प्रसन्न न होंय, जैसे जगत में द्रव्य को ज्ञान है, तातें द्रव्य में प्रीति है, काहेतें जो द्रव्य के गुण के ज्ञान ते संसार में सर्वज्ञान होत है, सो याही ते होय है, तैसई प्रभुन के गुणगान तें प्रभुन को ज्ञान होय, सो सर्वोपरि जानि प्रीति होय, तातें सम्पूर्ण अलौकिक कार्य सिद्ध होय, और एतन्मार्ग के अष्टछाप के कीर्तन

गावे तथा सुनिवे में प्रीति राखें, सो काहेते जो पुष्टिलीला के दर्शन अष्टछाप में हैं और अन्य मार्ग के कीर्तन जुग जुग में अंशकला तें कृष्ण प्रकट होत है तिनके हैं, तातें यह जानिके अन्यमार्गीय कीर्तन न सुने। अपने ठाकुरजी के लीला के नहीं है यह जानि के कोई अन्यमार्गीय एतन्मार्ग के कीर्तन अष्टछाप के गावें तिनको हूं न सुनें और जैसे जमुना जल और के पात्र में होय तो पुष्टिमार्गीय कैसे पीवे ? जो पीवे तो भ्रष्ट होय जाय तैसेंई अष्टछाप के कीर्तन वैष्णव के मुखतें सुनें, और श्री ठाकुरजी की सेवा तथा दर्शन करिकें निकसें तब पीठ फेरिके बाहिर न निकसे, क्यों जो अपराध पड़े है तासो दण्डवत् करे, ता पाछे और ठौर जाय, तब अपराध निवारण होय, और श्री ठाकुरजी के सनमुख दण्डवत् करे, परन्तु श्री ठाकुरजी के पीठ पाछे दण्डवत् न करे, तहाँ बैठे हु नहीं, सो काहेते जो श्री ठाकुरजी के पीछे बहिर्मुखता है, सो याकों होय, सो दामोदर लीला के प्रसंग में श्री आचार्यजी महाप्रभुजी कहे हैं, जो श्री यशोदाजी श्री ठाकुरजी को पकरन को आई तब श्री ठाकुरजी भागे, ज्यों ज्यों पीठ दीठी, त्यों त्यों क्रोध बढ्यो, और स्नेह छूट्यो, तब श्री ठाकुरजी बंधे, तातें प्रभुन के सनमुख बैठनों, और अपने गुरुन को स्वरूप अपने हृदय में राखि दण्डौत करि विज्ञप्ति करे, जो महाराज मैं संसार समुद्र में बूडत हों ताते आप बांह पकरिकें काढो तो निकसि आऊं और मेरी सामर्थ्य तो निकसिवे की नाहीं है, सो मैं आपकी शरन हों आपकी सेवा को चोर हूं, और साधन करिकें हीन हूं तातें आपके शरण बिना, आश्रय बिना और उपाय नहीं है सो

मोंसे पतित को कृपा करिके उद्धार करिवे बारे आपुही हो, सो आप कृपा करोगे, तब प्रभु प्रसन्न होइंगे, और श्री ठाकुरजी अपने घर में बिराजे हैं, तिन में गुरुभाव, प्रभुभाव दोउ राखे, और मुखारविंदरूप श्रीआचार्यजी महाप्रभुजी है, या भावतें पुष्टिमार्ग में भाव ही मुख्य है, सो लौकिक दृष्टांत तें कहत हैं, जो एक देह संबंधी है, एक भाव संबंधी है, अपनी बेटी है, सो देह संबंधी है, और बहु है सो भाव संबंधी, अपनी बेटी देह तें प्रगटी है, परन्तु पराये घर जाय, और पाली पोसी है, तोहुं अपने घर की नांहि है, और बहु, काहु की बेटी है, सो भाव संबंध ते घर में आई और मालिकनी भई काहे तें जहाँ भाव संबंध है, सो दृढ़ है, जैसे देह संबंधी यादव तिनको क्षय भयो, और भाव संबंधी जे ब्रजभक्त तिनको अपनपो दीयो तैसेई श्रीआचार्यजी पुष्टिमार्ग प्रगट करिकें जीवनकुं ब्रह्म संबंध कराये, और भाव संबंध दृढ़ करि दीयों, सो ऐसो दान भयो है, परन्तु पतिव्रत धर्म में चले, तो प्रभु प्रसन्न हो, तेसेई वैष्णव साक्षात् श्री पूर्ण पुरुषोत्तम को अपनें पति जानें, और इनही की सेवा स्मरण में तन-मन-धन समर्पन करें तो प्रभु प्रसन्न होय, सो या प्रकार कृपा करिके श्री गोकुलनाथजी आप कल्याण भट्ट सों कहे हैं, और पाछे यह आज्ञा कीये हैं, जो यह पुष्टिमार्ग को सिद्धांत अत्यन्त गोप्य है, सो काहु के आगे मति कहियो, और केवल अनन्य भगवदीय होय, तासों कहियो, यह हमारी शिक्षा है, सो तुम जानोगे।

।। इतिश्री गोकुलनाथजीकृत चौबीसमों वचनामृत सम्पूर्णम् ।।